अर्थशास्त्र में राजनीति सम्बन्धी प्रश्नों पर विस्तृत रूप से विचार किया गया है। इसे राजनीतिशास्त्र के साथ संविधान का भी ग्रन्थ कह सकते हैं। चाणक्य कोई कल्पनावादी विचारक न था। उन्होंने अरस्तू के समान व्यावहारिक राजनीतिक सिद्धान्तों का वर्णन किया है। कौटिल्य का चिन्तन गहन और विस्तृत था। उन्होंने अपने पूर्ववर्ती राजनीतिक चिन्तन और अनुभव का गहरा अध्ययन किया है, तदुपरान्त अर्थशास्त्र ग्रन्थ की रचना की। पूर्व विद्वानों में कौणपदन्त, भारद्वाज, मनु, पराशर, नारद, इन्द्र प्रमुख हैं। उसने एक शक्तिशाली मौर्य साम्राज्य की स्थापना की।

राज्य की उत्पत्ति
[ORIGIN OF STATE]

प्राचीन भारत में राज्य की संस्था की उत्पत्ति के सम्बन्ध में कई प्रकार के सिद्धान्त माने जाते थे। पहला सिद्धान्त यह था कि युद्ध की परिस्थिति में सैनिक आवश्यकताओं के कारण राज्य का जन्म हुआ। ऐतरेय ब्राह्मण (1/14) में यह कहा गया है कि देवासुर संग्राम में देवताओं ने बार-बार असुरों से हारने पर यह अनुभव किया कि उनकी पराजय का कारण उनमें कोई राजा नहीं है, अतः उन्होंने अपना एक राजा चुन लिया। दूसरा दैवी सिद्धान्त का है। इसके अनुसार भगवान ने विभिन्न देवताओं के अंश लेकर राजा का निर्माण प्रजा के कल्याण के लिए किया। मनु ने राजा के दैवी सिद्धान्त को स्वीकार किया। तीसरा सिद्धान्त विकासमूलक है, इसके अनुसार राज्य की संस्था का क्रमशः धीरे-धीरे विकास हुआ है। अथर्ववेद (8/10/1) में यह बताया गया है कि राज्य संस्था क्रमिक विकास का परिणाम है। चौथा सिद्धान्त यह है कि आरम्भिक स्वर्णयुग की समाप्ति पर दैन्य, मोह, लोभ, काम और राग आदि की भावनाओं के प्रबल होने से मानव-स्वभाव में भयावह स्थिति उत्पन्न हो गयी थी, इससे छुटकारा पाने के लिए लोग ब्रह्मा की शरण में गये, उसने उन्हें दण्डनीति का उपदेश दिया और इसके अनुसार राज्य की तथा राजा की उत्पत्ति हुई (महाभारत, शान्तिपर्व, अध्याय 58/5-22)।

राज्य उत्पत्ति का पाँचवाँ सिद्धान्त मत्स्य न्याय और अनुबन्धवाद का है। कौटिल्य ने इसी सिद्धान्त का समर्थन किया है। इस विषय में कौटिल्य के विचार हॉब्स के समान हैं। इस सम्बन्ध में कौटिल्य ने कहा है कि मानव समाज में पहले कोई दण्ड-व्यवस्था नहीं थी, इससे बड़ी अराजकता व्याप्त थी। इसे कौटिल्य ने मत्स्य न्याय का नाम दिया है। जिस प्रकार बड़ी मछली छोटी एवं निर्बल मछली को अपना आहार बना लेती है, उसी प्रकार उस युग में सबल निर्बल मनुष्यों की सम्पत्ति और अधिकारों को हड़प रहे थे। इस अराजकता की स्थिति से परेशान आकर मनुष्यों ने वैवस्वत के पुत्र मनु को अपना राजा बनाया। मनु और प्रजा के बीच एक समझौता

हुआ जिसके अनुसार प्रजा ने राजा को राज्य शासन चलाने के लिए, अन्न की उपज का छठवाँ भाग, व्यापार द्वारा प्राप्त धन का दसवाँ भाग और हरण्य की आय का कुछ भाग कर रूप में देने का निश्चय किया।[1] साथ ही साथ, यह भी स्पष्ट कर दिया गया कि कर से प्राप्त धन का अधिकारी वही राजा होगा जो अपनी प्रजा को धन-धान्य से सुखी रखेगा तथा सभी व्याधियों एवं शत्रु आक्रमण से रक्षा करेगा।[2]

इस प्रकार यह समझौता द्विपक्षीय था, जिससे राजा और प्रजा अपने कर्तव्य से बँधे हुए थे। राजा प्रजा के प्रति तथा प्रजा राजा के कर्तव्य निभाने के लिए बाध्य थे। जो राजा प्रजा के प्रति अपने कर्तव्य से विमुख होगा वह अपने अधिकार से वंचित कर दिया जायेगा। प्रजा उसकी धन-धान्य से सहायता करना बन्द कर देगी अर्थात् राजा को पद से पदच्युत कर देगी। उन्होंने कहा है प्रजा के सुख में ही राजा का सुख है। प्रजा के हित में ही उसका हित है, राजा का अपना प्रिय या सुख कुछ नहीं है। प्रजा का प्रिय ही उसका प्रिय है। राजा के कुछ निश्चित कर्तव्य हैं, इन्हें पूरा करने के बदले में ही वह प्रजा से निश्चित करों के रूप में अपनी वृत्ति या वेतन प्राप्त करता है। राजा को प्रजा पर, उसकी पूर्व अनुमति के बिना कर लगाने, तत्सम्बन्धी धन संचय करने तथा उसे खर्च करने का अधिकार नहीं है। कौटिल्य के यह विचार लोकतन्त्रीय हैं। कौटिल्य ने प्रजा के हाथ में वित्तीय अधिकार सौंप कर निश्चित ही राजा को निरंकुश बनने से रोक दिया।